चुनौती बस यही है कि शिक्षक सोचने–विचारने और पढ़ने–लिखने वाले बनें!

शिक्षक धर्मपाल गंगवार से कमलेश चंद्र जोशी की बातचीत



कमलेश जोशी : अपने बचपन और सामाजिक पृष्ठभूमि के बारे में कुछ बताइए।

धर्मपाल गंगवार : हमारा परिवार, गाँव में रहता था। मेरे पिता बाहर सर्विस करते थे, और बाक़ी सब लोग खेती में लगे हुए थे। घर में सब पढ़ते थे। रात को दीदी, ताई, दादी कहानियाँ सुनाती थीं और हम लोग आसमान, पृथ्वी मण्डल देखते, चाँद-तारों को निहारते तो मज़ा आता था। हम लोग ताऊ के साथ गाय-भैंस चराने जाते, घूमना, दिनभर गेंद-बल्ला खेलना, और नदी किनारे का गाँव था तो नदी में नहाना। इस सबके साथ-साथ पढ़ाई भी चलती रही।

कमलेश जोशी : अपनी शुरुआती और कॉलेज की पढ़ाई व शिक्षक प्रशिक्षण के बारे में बताइए।

धर्मपाल गंगवार : मेरी शुरुआती कक्षाओं की पढ़ाई अपने गाँव में हुई। जूनियर हाई स्कूल दूसरे गाँव (ईंटगाँव) पढ़ने गए। कई आसपास के गाँवों के लड़के एक गाँव से दूसरे गाँव इकट्ठे होते और फिर साथ-साथ पढ़ने जाते थे। वह अच्छा स्कूल था। अध्यापक लोग अच्छे थे, काफ़ी मेहनत से पढ़ाते थे। रामभरोसे लाल गुरुजी अभी भी मुझे याद हैं। बेंत लेकर चलते थे लेकिन अच्छी गणित पढ़ाते थे। एक और गुरुजी लालाराम गंगवार मुझे याद आते हैं जो हिन्दी बहुत अच्छी पढ़ाते थे। मुझे लगता है हिन्दी में मेरी रुचि इसी से जागी होगी। कक्षा 9 से 12 तक की मेरी पढ़ाई इंटर कॉलेज पीलीभीत में हुई। चूँकि मेरे पास खेती थी, मैंने बीएससी एग्रीकल्चर करने का सोचा था इसलिए मैंने धामपुर के एग्रीकल्चर डिग्री कॉलेज में एडमिशन लिया था। उसी समय बीटीसी में जगह निकली थी। मैंने

आवेदन किया और मेरा बीटीसी में नाम आ गया। उन दिनों, राजकीय दीक्षा विद्यालय, जो टीचर ट्रेनिंग स्कूल हुआ करते थे, का बहुत नाम था। घरवालों और रिश्तेदारों ने यह सोचकर, कि पहले नौकरी सुरक्षित कर ली जाए, बीएससी छुड़वा दी और मैंने बीटीसी (87–88, 88–89) में एडमिशन ले लिया। यहाँ सभी अध्यापकगण मित्रवत थे और पढ़ाना सिखाते थे। इसके बाद मुझे लगा कि अब मैं अध्यापक तो बनूँगा ही। मैंने बरेली में डिग्री कॉलेज से बीए किया और नौकरी लगने के बाद हिन्दी में एमए।

कमलेश जोशी : बीटीसी ट्रेनिंग करते हुए क्या शिक्षक बनने का कुछ-कुछ रुझान शुरू हुआ था या तब ऐसा कुछ भी महसूस नहीं हुआ?

धर्मपाल गंगवार : वहाँ का वातावरण ही ऐसा था कि शिक्षक बनने का एहसास होने लगा था। उन दिनों पढ़ाना उतना मुश्किल नहीं लगता था। ब्लैकबोर्ड पर हम पूरी प्रक्रिया करते जाते और अपनी पाठ योजना में लिखते थे। सर ख़ुश होते और कहते, 'हाँ ठीक है'। अध्यापक अपने कथन में कुछ बातें बताते थे कि आपको यह बात स्पष्ट करनी चाहिए, बच्चों के साथ इस तरह से पेश आना है, ये करना है, आदि। बाद में हमारे संस्थान द्वारा कैम्प भी लगवाए गए जिसमें बताते थे कि प्राइमरी स्कूल के शिक्षक के रूप में बच्चों के बीच किस तरह से काम करना है। हालाँकि उस समय पढ़ाने में आने वाली चुनौतियों से रूबरू नहीं किया जाता था। बस ये था कि हमको पढ़ाना है, स्कूल में इसी पर ज़्यादा ज़ोर रहता था।



कमलेश जोशी : आपका बीटीसी और ग्रेजुएशन के उपरान्त शिक्षक बनने का सफ़र कब शुरू हुआ, कैसा रहा, और कितने साल पढ़ाते हो गए आपको?

धर्मपाल गंगवार : ग्रेजुएशन के बाद मैं खेती-बाड़ी करने लगा। घर में ऐसा रुझान बिलकुल नहीं था कि मैं कहीं नौकरी करने बाहर जाऊँ। लेकिन 1994 में हम लोग नैनीताल आए और तब मैंने शिक्षक बनने के लिए एप्लाई किया। उस दौरान यहाँ पर उत्तराखंड आन्दोलन शुरू हुआ तो नियुक्ति काफ़ी लेट हुई पर मिल गई! 15 अप्रैल, 1995 को राजकीय प्राथमिक विद्यालय, सूर्यागाँव में मेरी पोस्टिंग हो गई। ये जगह भीमताल में पहाड़ पर है। मुझे लगता है कि

अगर मैं पहाड़ में नौकरी न करता तो काफ़ी चीज़ों से वंचित रह जाता। वहाँ की कुमाऊँनी भाषा, रहन-सहन, खान-पान से मैं काफ़ी रूबरू हुआ; ख़ासकर पैदल चलना। वहाँ के मास्टर साहब के साथ मैं पैदल जाता था। रास्ते में वे मुझे *कई* कहानियाँ सुनाते थे। वो जीवन जीने की कला, मसलन, कैसा जीवन जीना चाहिए, कैसे रहना चाहिए, आदि पर चर्चा करते थे। उनका मुझपर प्रभाव पड़ा। यह सफ़र तब शुरू हुआ और आज मुझे इस पेशे में 25 साल हो गए हैं।

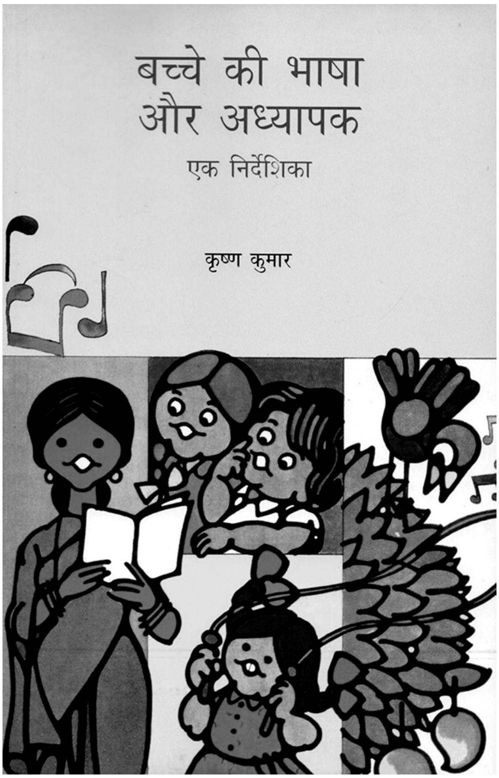


कमलेश जोशी : आप नियमित रूप से पढ़ते भी रहते हैं। यह रुचि आपमें कैसे विकसित हुई? शिक्षक के लिए इसे कितना महत्वपूर्ण मानते हैं?

धर्मपाल गंगवार : मैं रुहेलखंड यूनिवर्सिटी से स्नातक कर रहा था, वहाँ का सिलेबस बहुत अच्छा था। वहाँ पहले साल के कोर्स में उपन्यास था *निर्मला* और दूसरे साल श्रीलाल शुक्ल का *राग दरबारी*। इनकी भाषा बहुत सुन्दर थी, और ये उपन्यास गहरे तक असर कर गए। एक तीसरी किताब थी *मैला आँचल*। इसके अलावा इसमें *पंचवटी, यशोधरा और कुरुक्षेत्र* किताबें थीं। यहाँ से मुझे लगा कि साहित्य पढ़ने में बेहद दिलचस्प चीज़ है। स्नातक के बाद मेरा पढ़ना-लिखना बन्द हो गया क्योंकि नियुक्ति नहीं हुई और मैं घर पर खेती-बाड़ी कर रहा था, तो पढ़ने-लिखने का माहौल था नहीं। वैसे मुझे *निर्मला* पढ़ने के बाद मुंशी प्रेमचंद के साहित्य की ललक लग गई थी। मैं जब कभी स्टेशन जाता और यदि कहीं भी कहानियाँ दिखतीं, मैं ख़रीद लेता था। उन्हीं दिनों मैं प्रेमचंद का उपन्यास लाया *ग़बन* और उसके बाद *गोदान*। फिर मुझे मुंशी प्रेमचंद इतने भा गए कि मैंने उनकी लगभग सभी कहानियाँ पढ़ डालीं। मुझे पढ़ने में मज़ा आने लगा और जब मैं अध्यापक बन गया तो इधर भी गाहे-बगाहे पढ़ता रहा। जब मैं यहाँ खटीमा, ऊधम सिंह नगर आया तो अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ा, तब मैंने दिनेशपुर के ज़िला संस्थान की भरी-पूरी लाइब्रेरी देखी। वहाँ तरह-तरह की किताबें हैं। वहाँ पर जो पहली किताब मैंने इशू कराई थी वो थी *नीलबाग़ स्कूल*। किताब पढ़कर मुझे लगा कि शिक्षा तो कुछ अलग ही मामला है। मैं क्या कर रहा हूँ स्कूल में...। इसके बाद कृष्ण कुमार की *राज समाज और शिक्षा* पढ़ी। इन किताबों को पढ़ने के बाद से मेरी शिक्षा सम्बन्धी किताबें पढ़ने की रुचि जागी और समझना शुरू हुआ कि शिक्षा का पूरा मुद्दा क्या है। कृष्ण कुमार की सारी किताबें मैंने पढ़ डालीं। चाहे वो *ग़ुलामी की शिक्षा और वर्चस्व* हो, *शिक्षा और ज्ञान, बच्चे*

की भाषा और अध्यापक हो, *दीवार का इस्तेमाल, सपनों का पेड़, अब्दुल मजीद का छुरा, मेरा देश तुम्हारा देश, शान्ति का समर, चूड़ी बाज़ार में लड़की,* या *काठगोदाम* हो, ये सारी किताबें मैंने ख़रीदीं और घर की लाइब्रेरी में इन्हें शामिल किया।

इसी तरह से दूसरे शिक्षाविद् हैं गिजुभाई, जिनको मैं पहले नहीं जानता था। उनकी किताब *दिवास्वप्न* मैंने अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन ज़िला संस्थान दिनेशपुर से ही इशू कराई थी। इसके बाद मैंने गिजुभाई को पढ़ना शुरू किया। उनकी कई किताबें पढ़ीं और मुझे लगा कि ये किताबें घर में होनी चाहिए। इनके अलावा, तमाम और किताबें जो शिक्षा जगत से जुड़ी हुई थीं, उन्हें भी पढ़ा। इनसे मुझे ये लगने लगा कि जो हम कक्षा में पढ़ा रहे थे वो पर्याप्त नहीं था। मैंने बीटीसी की थी, उससे कुछ नहीं जुड़ रहा था। वो पुरानी चीज़ें थीं। अब कुछ नया विमर्श आया है, कुछ नई बातें कही जा रही हैं, ये चीज़ें मुझे धीरे-धीरे समझ में आने लगीं। भाषा का मामला हो तो रमाकांत अग्निहोत्री, हृदयकांत दीवान, ये समझ में आने लगे। मुझे लगता है कि शिक्षक को पढ़ता-लिखता ज़रूर होना चाहिए। मैं अध्यापक हूँ और मेरा काम है पढ़ना और पढ़ाना। इसलिए पढ़ना मुझे पहले ज़रूरी लग रहा है। जब आप लगातार पढ़ रहे हैं तभी आप अपनी कक्षा में कुछ अच्छा कर पाएँगे, शैक्षिक मुद्‌दों को समझ पाएँगे, वरना आप बताते रहेंगे पर पढ़ा नहीं पाएँगे। बच्चों से संवाद स्थापित करना है, बातचीत का, लिखने का क्या महत्त्व है, ये सारी बातें मुझे समझ में आईं। इसके अलावा, तमाम आलेख जो मुझे मिलते हैं, ये कहीं-न-कहीं हमारे पेशेवर कार्य से जुड़ते हैं। मुझे लगता है कि हर अध्यापक को पढ़ने-लिखने का काम अपने अध्यापकीय जीवन में ज़रूर करना चाहिए। तभी आप बच्चों को साहित्य से जोड़ सकते हैं। जैसे अगर हम बाल साहित्य देखते हैं तो उसमें बड़ी मज़ेदार किताबें हैं। जब आप ख़ुद साहित्य अनुरागी होंगे, ख़ुद लगातार पढ़ रहे होंगे तो आपको लगेगा कि ये किताबें कुछ अलग कह रही हैं। मैंने ऐसा सोचा ही नहीं। मैं इन्हें महज़ बच्चों की किताब समझ रहा था लेकिन ये कुछ अलग ही मामला है। मैंने लाइब्रेरी का काम शुरू किया। ख़ुद पढ़ता हूँ और बच्चों को पढ़ाता हूँ और आज भी यह पढ़ने-पढ़ाने का सिलसिला लगातार ज़ारी है।



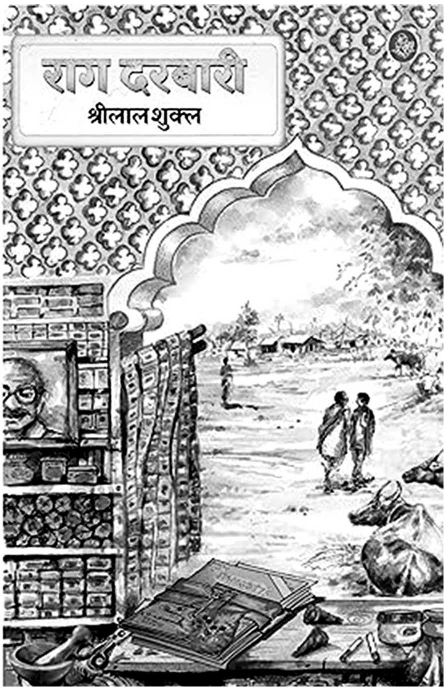
कमलेश जोशी : *नीलबाग का स्कूल* और *राज समाज और शिक्षा* आपने किस समय पढ़ी होगी?

धर्मपाल गंगवार : मैंने 2013 में ये दोनों किताबें पढ़ी होंगी। *राज समाज और शिक्षा* से मुझे शिक्षा को लेकर जो प्रश्न थे कि ऐसा क्यों है, उनमें से कई के जवाब मिले लेकिन कई नए मेरे प्रश्न भी उठे। उसमें एक अध्याय है सुबह की प्रार्थना सभा को लेकर, वह शायद कृष्ण कुमार से सर्वे कराया गया था पूरे उत्तर भारत की प्रार्थनाओं

का। प्रार्थना का क्या औचित्य है और वे क्या कहती हैं। यह पढ़कर मन में सवाल आया कि हम बच्चों को प्रार्थना क्यों रटवाए पड़े हैं, क्यों ज़बरदस्ती कहलवाए पड़े हैं, उसपर मैंने एक लेख भी लिखा जो किसी पत्रिका में छपा था।

कमलेश जोशी : एक शिक्षक की भूमिका में आप अपने शिक्षण कार्य में किन बातों को सबसे महत्त्वपूर्ण समझते हैं?

धर्मपाल गंगवार : मुझे लगता रहा है कि एक शिक्षक का अपने बच्चों से जुड़ाव होना ही चाहिए। जितना उसका जुड़ाव होगा, बच्चे निःसंकोच अपनी बात कह पाएँगे और इससे आप बच्चों को बेहतर समझ पाएँगे। आपमें बच्चों की बात सुनने की क्षमता हो, ये सबसे ज़रूरी है। होता अकसर ये है कि सुना कम जाता है और सुनाया ज़्यादा। मैंने ये अनुभव किया है जब आप बच्चों को सुनते हैं उन्हें ज़्यादा मज़ा आता है। आप उनको धैर्यपूर्वक सुन लें जब उनके पास सुनाने को कुछ भी न रहे फिर उनसे आप अपनी बात कह सकते हैं, नहीं तो संवाद नहीं हो पाएगा। आप कुछ कहना चाह रहे हैं, बच्चा कुछ और सुनना चाह रहा है, इसलिए मुझे लगता है ये जुड़ाव बहुत ज़रूरी है। सुनने को लेकर मुझे *तोत्तोचान* किताब की बहुत याद आती है। वहाँ जो हेड मास्टर साहब थे, जब वे पहली बार तोत्तोचान से मिलते हैं, उसे तीन-चार घण्टे तक सुनते रहते हैं। और फिर वो कहती है कि ''...अरे वाह! लगता है कि आपके साथ मेरी बात बनेगी...।'' यह चीज़ मुझे प्रभावित करती है। इसके अलावा, शिक्षक अपने व्यवहार से बच्चों के बीच संवेदनशील शिक्षक की छवि बनाएँ। उनसे ऐसी बातचीत करें जिससे बच्चों के लिए कुछ मतलब निकलकर आए। मुझे लगता कि केवल पढ़ा देना ही शिक्षण नहीं है। कोई पाठ क्यों रखा गया है, कंटेंट क्या है उसका, उसे उभार पाना ही सही शिक्षण है। और उसमें भी केवल एकतरफ़ा नहीं, बल्कि दोतरफ़ा संवाद हो। मतलब कुछ बच्चे कहें और कुछ हम, उन्होंने बच्चों की सहभागिता हो, तब लगता है कि कोई बातचीत बनी है। ऐसे में बच्चों को लगता है कि जो बात उसने कही है, वो भी महत्त्वपूर्ण है और उन्हें भी सुना जा रहा है।



कमलेश जोशी : आपने विद्यालय में भाषा शिक्षण को लेकर अच्छा काम किया है। इससे जुड़े कुछ शिक्षण अनुभव बताएँ।

धर्मपाल गंगवार : मैं भाषा का विद्यार्थी रहा हूँ। मुझे लगता है हिन्दी भाषा, पर्यावरण अध्ययन, गणित, या अँग्रेज़ी भी सिखाने की जड़ है। हिन्दी भाषा की हर विषय सिखाने में ज़रूरत होती है, बिना इसके काम चलेगा ही नहीं। आप गणित कैसे पढ़ाएँगे यदि बच्चा भाषा नहीं जानता होगा! इसकी महत्ता को मैं स्वीकार करता हूँ कि बच्चे पहले पढ़ना सीखें, लिखना सीखें, बात करना सीखें, तभी आप उनको कुछ और बता सकते हैं। इसके लिए मैंने अपने विद्यालय में लाइब्रेरी बनाई है, उसमें क़रीब 700-800 अच्छी किताबें होंगी। मेरा इस बात पर काफ़ी फ़ोकस रहता है कि बच्चों को सप्ताह में एक या दो बार किताबें पढ़कर सुना

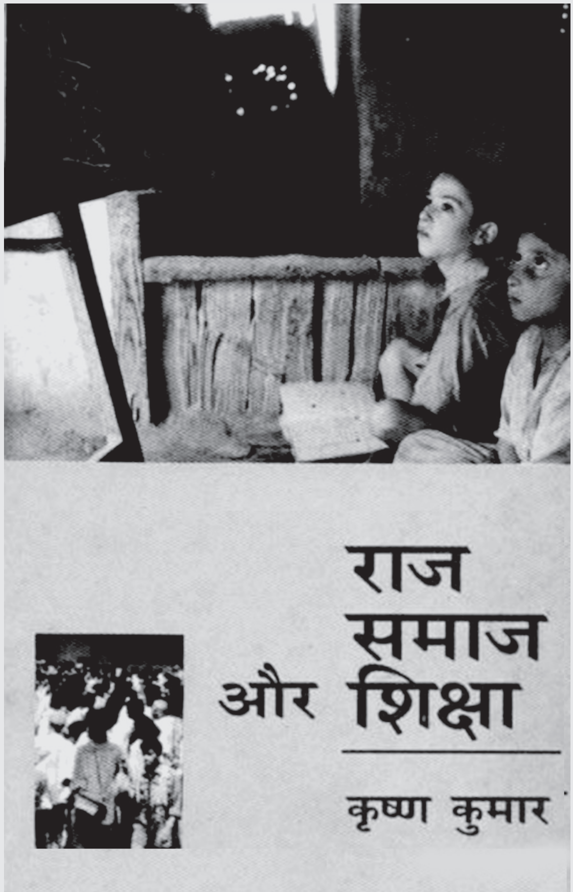
पाऊँ। बाल साहित्य में बच्चों को तरह-तरह के मायने मिलते हैं। वो सोचते हैं कि ऐसा मैंने सोचा ही नहीं था, या देखा ही नहीं था, उनका शब्द भण्डार बढ़ता है। मैं कोशिश करता हूँ कि बच्चे ढेर सारी किताबों को पढ़ें और इसको मैं पहले ही दिन से शुरू करता हूँ। जैसे– कक्षा एक में *बरखा* सीरीज़ की किताबों को देखें, उसमें हर पेज पर एक या दो लाइन होती हैं। जब बच्चों को इस तरह की सन्दर्भपूर्ण सामग्री पढ़ने को मिलती है, उनका भाषा से जुड़ाव बनता है। वे उन किताबों के चित्रों को पढ़ते हैं। वो देखते हैं कि बाएँ से दाहिने पढ़ा जाता है, शब्द अलग-अलग लिखे हैं, उनमें कुछ चित्र हैं जिनसे लिखित सामग्री का जुड़ाव बन रहा है, वहाँ से उनके पढ़ने की शुरुआत होती है। फिर बच्चे धीरे-धीरे बड़ी किताबें भी पढ़ने लगते हैं। मुझे याद है, मेरे यहाँ एक बच्ची थी आयशा, उसने बड़ी किताब *पहला अध्यापक* पढ़ी। आज भी बच्चे रोज़ाना किताबें ले जाते हैं और जब रोज़ाना ले जाते हैं तो लिखने के लिए अग्रसर होते हैं। वहाँ से उन्हें शब्द मिलते हैं, वाक्य मिलते हैं और एक पूरा सन्दर्भ मिलता है। मुझे लगता है कि भाषा पर काम करना बेहद रोचक और मज़ेदार है। यह बहुत ज़रूरी है कि आप लाइब्रेरी का लगातार इस्तेमाल करते रहें, बच्चों को भाषा पढ़ाएँ और बातचीत के मायने खोलते रहें। यहीं से पढ़ने और लिखने की शुरुआत होती है और बच्चे शुरुआती पाठक बनने की ओर अग्रसर होते हैं। जब उन्हें पहले से ही रुचि हो जाती है तो वे आगे भी पढ़ना चाहते हैं। आज यह बहुत ज़्यादा ज़रूरी है कि बच्चे पाठक बनें। ये किताबें बच्चों के लिए हैं ही, लेकिन मुझे लगता है कि यह हम बड़ों यानी शिक्षकों के लिए भी उतनी ही उपयोगी हैं। हम उनको पढ़ें, उनका रस लें, तब ही हम बच्चों को कोई रस दे सकते हैं।

कमलेश जोशी : अपने शिक्षकीय अनुभव से अध्यापन की जो ख़ास बातें आपको समझ में आईं, उनके बारे में बताइए?

धर्मपाल गंगवार : ख़ास अनुभव यही है कि एक अध्यापक को लगातार अपने पेशेवर विकास के बारे में चिन्तनशील होना चाहिए। हमको सोचना पड़ेगा क्योंकि समाज हमें बुद्धिजीवी कहता है, और हमसे बहुत अपेक्षाएँ रखता है। हम समाज में बदलाव के वाहक माने जाते हैं। मुझे लगता है कि हम लोगों को लगातार पढ़ते और बात करते रहना चाहिए, साथ ही अपनी गुणवत्ता को निखारने के लिए लगातार चिन्तनशील होना चाहिए। शिक्षाविदों से मिलना, उनके आलेख पढ़ना, सेमिनार अटेंड करना, कुछ लेखन करना, आदि तरीक़ों से एक शिक्षक



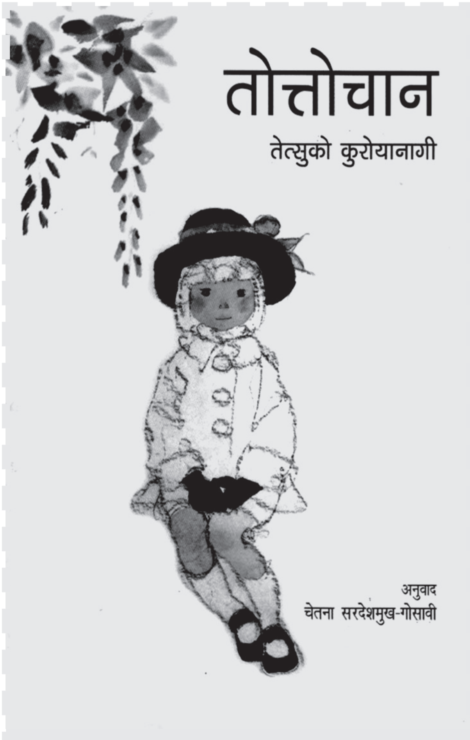
को लगातार जुड़े रहना चाहिए। मैं कक्षा अनुभव लिखने की कोशिश करता हूँ। एक अध्यापक के लिए यह भी ज़रूरी है कि वो चीज़ों का अवलोकन करे, वह देखे कि बच्चे पढ़ना-लिखना कैसे सीख रहे हैं और उन अनुभवों को दर्ज कर पाएँ। ये चीज़ें सुझाती हैं कि हम कैसे सुधार करें। पिछले साल हमने काम किया और उसको लिखा। इस साल जब हमने काम किया, उसे लिखने से पता लगता है कि इनमें अन्तर क्या है। कई बार आत्म-अवलोकन का मौक़ा मिलता है कि हमें वहाँ पर कुछ और करना चाहिए था, जो हम नहीं कर पाए। अवलोकनों को दर्ज करने के साथ ही पाठ योजना बनाना भी बेहद ज़रूरी है। किसी पाठ को लेकर हमारे पास कुछ सवाल होते हैं, जिनपर हमें संवाद करना होता है। अगर हम बिना किसी तैयारी के यूँ ही कक्षा में चले जाएँगे, संवाद किस विषय पर करना है, फ़ोकस किस बात पर करना है, कौन-से सवाल हमारे सोचने वाले होंगे, वो चीज़ अगर कहीं छूट जाती है तो शिक्षण अधूरा रहता है। हमारे पास शिक्षण की बहुत बड़ी लिखित योजना भले न हो, पर छोटी योजना ज़रूर हो। तब जाकर हमारा शिक्षण बेहतर होता है और उसमें लगातार निखार आता है। इसके लिए अपने साथियों से भी लगातार चर्चा करनी चाहिए। अगर आपका कोई ग्रुप है तो उसमें चर्चा कर सकते हैं, लिखकर साझा कर सकते हैं कि मैंने ये पाठ ऐसे पढ़ाया, आप कैसे पढ़ा सकते हैं। शिक्षा में केवल पढ़ा देना मुद्दा नहीं है, बड़ा मुद्दा यह है कि हम बड़े प्रश्नों से न भागें, उनपर चर्चा करें। कई बार हम ये सोच लेते हैं कि प्राथमिक स्तर पर इस तरह की चर्चा नहीं हो सकती है... यह बात ठीक नहीं है। शुरू से बड़े मुद्दों पर बच्चों के साथ चर्चा करनी चाहिए, मुद्दों को उभारना चाहिए, धीरे-धीरे बच्चे चर्चा में आते हैं, खुलते हैं और उनकी समझ का विस्तार होता है।



कमलेश जोशी : आप पुस्तकालय के बारे में बता रहे थे जो आपने अपने विद्यालय में बनाया है, इसके महत्त्व को स्कूल में आपने कैसे महसूस किया है?

धर्मपाल गंगवार : पहले भी मैं बच्चों को पढ़ाता था, लेकिन वो पुरानी तरह का बाल साहित्य था और उतना रोचक नहीं था। मैंने कृष्ण कुमार की किताबें *पढ़ना ज़रा सोचना,*

शिक्षा का सरोकार पढ़ीं। इनमें बाल साहित्य का महत्त्व बताया गया है। इसी तरह एक लेख 'मेरा निजी पुस्तकालय' पढ़ा जिससे मुझे लगा कि जितने महान लोग हैं, उन्होंने पढ़ा बहुत है और पढ़ने की आदत उनमें शुरू से रही है। वह बीज उनके माता-पिता से, उनके शिक्षकों से पड़ा है। मेरी यही कोशिश रहती है कि मैं शुरू से यह बीजारोपण कर सकूँ कि बच्चे बाल साहित्य से जुड़ें, उसको पढ़ें और अच्छे पाठक बनें, क्योंकि मुझको लगता है कि इसके बिना कुछ होना नहीं है। शुरू में लगता था कि यह प्रक्रिया बहुत धीमी है, पर यह बहुत तेज़ी से होती है। मैंने देखा कि जब बच्चे लगातार विद्यालय में बैठे किताबें पढ़ते रहते हैं, अपने साथियों को सुनते रहते हैं, कक्षा 4, 5 में आकर वो अच्छे पाठक और लेखक बन जाते हैं, तो पुस्तकालय का उपयोग बेहद प्रभावी है। मुझे ख़ुशी है कि मेरे स्कूल में कई बहुत अच्छे पाठक हैं जो अच्छी किताबें पढ़ते हैं और लिखते भी हैं। जो पुराने विद्यार्थी हैं, वो भी आकर किताबें ले जाते हैं।



कमलेश जोशी : आपका समुदाय से भी काफ़ी अच्छा सम्बन्ध है। समुदाय से जुड़ाव के आपके क्या अनुभव रहे हैं?

धर्मपाल गंगवार : हमारे स्कूल में अल्पसंख्यक बच्चों का बाहुल्य है। 25 साल से मैं उनके साथ हूँ। मैंने उनके गाँव में बच्चे देखे, चाचा-ताऊ देखे, भैया-भाभियाँ देखीं, मैंने कोई हिन्दू-मुसलमान नहीं देखा। बच्चे कभी पूछते हैं कि आप मुसलमान लगते हो जब आप इंशा अल्लाह कहते हो, और कभी आप हिन्दू लगते हो। मैंने कहा कि जिस समय तुमको जो लगता हूँ, वही हूँ मैं। उस गाँव में कई बेटियों की शादी हो गई है और उनके बच्चे हमारे यहाँ पढ़ने आने लगे हैं। मैं बच्चों के घर पर जाता हूँ, उनको लगता है कि गुरुजी हिन्दू हैं शायद चाय हमारे घर पर नहीं पिएँगे। मैं कह देता हूँ कि चाय घर पर बना लो वो बनाते हैं। जो द्वेष मैं आज समाज में देख रहा हूँ, वो मुझे कहीं नहीं दिखाई दिया। 25 साल में आज तक मुझे उस गाँव में किसी तरह की कोई दिक़्क़त नहीं हुई। कहीं भी मुझे कोई हिन्दू-मुसलमान नज़र नहीं आता, सब बच्चे नज़र आते हैं। हम व्यक्तिगत ज़िन्दगी में झाँककर देखें तो चीज़ें खुलती हैं। ऐसा नहीं है कि कोई किसी से नफ़रत कर रहा है। बहुत अच्छा कल्चर है इस्लामिक सभ्यता। मुझे उस गाँव से पिछले 25 सालों में बहुत प्यार मिला है। जिन बच्चों को मैंने 1998 में पढ़ाया था, अब उनके बच्चे पढ़ने आ रहे हैं और बहुत प्यार करते हैं। जब बच्चे आकर पाँव छूते हैं, लोग चौंक जाते हैं कि ये मुस्लिम बच्चा है और आपके पैर छू रहा है! मैं कहता हूँ पता नहीं क्यों छू रहा है! मुझे वहाँ हिन्दू-मुसलमान जैसा नहीं लगता, मुझे सब इंसान लगते हैं और बहुत मोहब्बत मिलती है।

कमलेश जोशी : आपके सुदीर्घ अनुभव से एक शिक्षक को कैसा होना चाहिए, क्या होना चाहिए?

धर्मपाल गंगवार : समाज शिक्षक के कार्य करने से ही बदला है। शिक्षक का काम केवल पढ़ा देना नहीं है, उसका काम बड़ा है। उस बड़े काम को समझना पड़ेगा, उसके लिए चिन्तन करना पड़ेगा कि केवल उसे नौकरी न समझे। जैसे ये शब्द कहे जाते हैं कि शिक्षक राष्ट्र निर्माण कर रहे हैं। हम राष्ट्र निर्माण कह तो देते हैं, लेकिन इसका मायने क्या है, इसकी प्रक्रिया क्या हो, ये जानना एक शिक्षक के लिए बहुत ज़रूरी है। हम सर्वांगीण विकास भी कह देते हैं, लेकिन इसका अर्थ क्या है, इसकी प्रक्रिया क्या होगी, इसको गहराई में जाकर सोचें कि इसके लिए हमको करना क्या है। परम्परागत तरीक़े से काम करते रहे और पाठ पढ़ा दिया, उतने से काम नहीं चलेगा। एक शिक्षक के लिए ज़रूरी है ये सोचना कि हम बदलाव के वाहक हैं और हमें बड़े परिवर्तन करके इंसानों का निर्माण करना है।

कमलेश जोशी : आपको हेड मास्टर बने भी काफ़ी साल हो गए हैं। क्या अनुभव, क्या चुनौतियाँ हैं हेड मास्टर के रूप में?

धर्मपाल गंगवार : मुझे हमेशा अच्छे साथी मिले, जिन्होंने मेरा हमेशा सहयोग किया है। मुझे लगता है कि काम करने में पारदर्शिता, खुलापन होना ज़रूरी है। दूसरा, सभी एक टीम की तरह काम करें। कई बार मैं अपने साथियों के साथ आलेख पढ़ने का काम भी करता हूँ। लेकिन चुनौती तो है! कुछ शिक्षक साथी आपके साथ आलेख पढ़ते हैं और काम करते हैं, लेकिन सभी करते हैं ऐसा नहीं है। ये एक बहुत बड़ी चुनौती है कि बाक़ी साथी भी पढ़ें और उस तरह से काम करें। और यह मेरे लिए अभी भी बड़ी चुनौती है कि वे पाठ योजना बना पाएँ, उसके अनुसार काम कर पाएँ, और पुस्तकालय की महत्ता समझ पाएँ। कुछ समझ पाए हैं, लेकिन कुछ को अभी भी लग रहा है कि ये महत्त्वपूर्ण नहीं है। चुनौती बस यही है कि बाक़ी शिक्षक भी सोचने-विचारने वाले और पढ़ते-लिखते शिक्षक बनें।

कमलेश जोशी : वर्तमान समय में एक शिक्षक होने की क्या चुनौतियाँ लगती हैं?

धर्मपाल गंगवार : वर्तमान समय चुनौतीपूर्ण है। एक तरफ़ सरकार है, शिक्षाविद हैं और एक तरफ़ बच्चा है। बच्चा भी वैसा, जिसके घर में पढ़ने-लिखने का माहौल नहीं है, और चीज़ों की दरकार ज़्यादा है। उनके जीवन में पढ़ने-लिखने से ज़्यादा कई काम महत्त्वपूर्ण हैं, जिन्हें वो वरीयता देते हैं। ये काफ़ी चुनौती भरा काम है। सरकार कुछ कर देती है, शिक्षाविद कुछ करते रह जाते हैं और अध्यापक कहीं अलग जूझ रहा है। उपस्थिति को लेकर भी



दिक़्क़त होती है, क्योंकि जो वर्ग हमारे यहाँ आता है, वह आगे की पढ़ाई के लिए ख़ुद को बहुत असहाय महसूस करता है। विभिन्न तरीक़ों के जो कौशल हैं, वो प्राथमिक स्तर से ही उनको बहुत चुनौती लगने लगते हैं। सरकार शिक्षकों को कई तरीक़ों के काम में आज भी लगाए हुए है। मसलन, आज भी हमारे एक शिक्षक बाढ़ ड्यूटी में हैं, और शिक्षक-शिक्षार्थी अनुपात कभी पूरा नहीं हुआ। पहले भी चार लोग थे, और आज जब 180 बच्चे हैं, तब भी हम 4 लोग हैं। ये बड़ी चुनौती है कि हम 4 शिक्षक हैं तो 5 कक्षाओं को कैसे पढ़ा पाएँगे। कई बार ख़ुद से शिक्षक लगाने पड़ते हैं, उनसे काफ़ी सहयोग मिलता है। चुनौतियाँ तो हैं, लेकिन ये कभी ख़त्म होंगी, ऐसा सम्भव नहीं है। उनसे जूझना ही मनुष्य का काम है। वह जूझता ही रहा है सदियों से। उसी में कुछ लोग बहुत अच्छा कर जाते हैं और कुछ बस सोचते रहते हैं।



(आभार : इस बातचीत को ट्रांसक्राइब करने में मनीषा सिंह, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर ने मदद की है)

कमलेश चंद्र जोशी प्राथमिक शिक्षा से लम्बे समय से जुड़े हुए हैं। प्राथमिक शिक्षा से जुड़े विभिन्न विषयों–शिक्षक शिक्षा, बाल साहित्य, प्रारम्भिक भाषा एवं साक्षरता आदि में गहरी रुचि। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर में कार्यरत।

सम्पर्क : kamlesh@azimpremjifoundation.org

धर्मपाल गंगवार राजकीय प्राथमिक विद्यालय, हल्दीपचपेड़ा, खटीमा (ऊधम सिंह नगर) में प्रधानाध्यापक के रूप में कार्यरत हैं। वे पिछले 27 सालों से अध्यापन के पेशे से जुड़े हुए हैं। उनकी शैक्षिक मुद्दों, भाषा शिक्षण व बच्चों के लिए पुस्तकालय को लेकर गहरी रुचि रही है। इसको लेकर वे अपने स्कूल प्रयोग करते रहे हैं और सीखने–सिखाने का सक्रिय माहौल बना पाए हैं। इसके अलावा उनकी स्वयं की भी पढ़ने–लिखने में रुचि रही है और नियमित रूप से पुस्तकें पढ़ते रहते हैं। वर्तमान में वे इस रुचि को अपने साथियों में भी एक समूह के माध्यम से विकसित करने के लिए प्रयासरत हैं।

सम्पर्क : dp09gangwar@gmail.com